हिंदी साहित्य के इतिहास का सबसे विवादास्पद और महत्वपूर्ण प्रसंग है - भक्ति-आंदोलन और भक्ति-काव्य। सिद्धों-नाथों की परंपरा के बाद भक्ति-आंदोलन का उदय कैसे हुआ? इस प्रश्न पर इतिहास और साहित्य के क्षेत्र में लगातार वाद-विवाद हुआ है। डॉ. रामविलास शर्मा ने इस बहस में आ.शुक्ल की धारणाओं का साथ दिया है। उन्होंने भक्ति-आंदोलन और भक्ति काव्य या संत काव्य पर कोई अलग से पुस्तक तो नहीं लिखी, लेकिन संत-कवियों के साहित्य पर अनेक निबंधों में विचार किया है। 'संत साहित्य के अध्ययन की समस्याएँ', 'तुलसी की भक्ति', 'तुलसी साहित्य के सामंत-विरोधी मूल्य', 'भक्ति आंदोलन और तुलसीदास', 'गोस्वामी तुलसीदास और मध्यकालीन भारत', 'मध्ययुगीन हिंदी कविता में गेयता', 'संत कवि और रवीन्द्रनाथ', 'काम, क्रोध, मद, लोभ और तुलसीदास' और 'भारतीय सौंदर्य बोध और तुलसीदास' आदि उनके बहुत से लेख 'परंपरा का मूल्यांकन', 'भारतीय

Scanned by CamScanner

साहित्य की भूमिका', 'भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश', 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिंदी आलोचना' जैसी पुस्तकों में मिलते हैं। उनके इन लेखों से जाहिर है कि डॉ.शर्मा के चिंतन-केंद्र में भक्ति-आंदोलन और तुलसीदास रहे हैं। आश्चर्य की बात है कि शर्मा जी ने निर्गुणधारा के क्रांतिकारी संत कबीर पर एक भी लेख नहीं लिखा। जहाँ-तहाँ प्रसंगवश कबीर की चर्चा की है। जीवन के अंतिम दौर में आ.हज़ारी प्रसाद द्विवेदी और डॉ. रामविलास शर्मा - दोनों तुलसीदास पर किताब लिखना चाहते थे किंतु दोनों का अरमान पूरा नहीं हो सका।

डॉ. रामविलास शर्मा भक्ति-आंदोलन की सामंत-विरोधी भूमिका को संत कवियों की लोकधर्मिता से सामने लाते हैं। वे भक्ति-काव्य को लोक-जागरण का काव्य कहते हैं और भक्ति-आंदोलन को विशाल सांस्कृतिक जन-आंदोलन। आ.शुक्ल जनता की 'चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य-परंपरा के साथ उनका सामंजस्य' दिखाने का प्रयत्न करते हैं। डॉ. शर्मा ने आ.शुक्ल की भक्ति-आंदोलन तथा संत काव्य संबंधी अनेक असंगतियों को दूर करने के लिए भक्ति-आंदोलन के लोकजागरणवादी सामंत-विरोधी सामाजिक आधार की भूमिका को स्पष्टता से उजागर किया। उन्होंने भक्ति-आंदोलन और संत काव्य के वर्गीय आधार के विवेचन में जुलाहों-कारीगरों, व्यापारियों, किसानों के सामाजिक आधार को प्रधानता दी। शेरशाह और अकबर के शासनकाल में जन-सुधार कार्यों से जैसे नहरों-सड़कों-व्यापारिक मंडियों के कार्य से सामंतवादी व्यवस्था कमज़ोर हुई। पुराने जनपदों का अलगाव दूर हुआ और वे मिलकर एक 'जाति' के रूप में संगठित होने लगे। इसलिए भक्ति-आंदोलन को वे भारत का सबसे विराट सांस्कृतिक और जातीय आंदोलन घोषित करते हैं। जो विद्वान यह समझते रहे हैं कि अंग्रेज़ों ने यहाँ के सामंती ढाँचे को तोड़कर नवीन सामाजिक ढाँचे को जन्म दिया। उनके विषय में डॉ.शर्मा का कहना है कि ऐसे मार्क्सवादी और गैर-मार्क्सवादी दोनों तरह के विद्वान भक्ति-आंदोलन की सामंत-विरोधी भूमिका पर पर्दा डालते हैं। डॉ.शर्मा ने भक्ति-आंदोलन और संत काव्य को एक-साथ रखकर देखने के बाद कहा - 'भारतीय समाज में यह परिवर्तन उसकी अपनी ही शक्तियों से हो रहा था। यहाँ के लोगों को व्यापार करना ईरानियों, पठानों, अरबों या तुर्कों ने नहीं सिखाया था। सैकड़ों वर्षों से कायम सामंतवाद कभी का अपनी ऐतिहासिक भूमिका खत्म कर चुका था। उसे समाप्त करने वाली शक्तियाँ उसी के गर्भ में पुष्ट हो रही थी। ये शक्तियाँ व्यापारियों, जुलाहों, कारीगरों, गरीब किसानों की थीं जिनके सांस्कृतिक विकास और सुखी जीवन में सबसे बड़ी बाधा थी सामंतवाद।' (परंपरा का मूल्यांकन, संत साहित्य के अध्ययन की समस्याएँ) इस सामंतवाद की ताकत को भक्ति-आंदोलन ने धूल चटा दी। यह ध्यान रखने की बात है कि केवल धार्मिक प्रभावों की खोजबीन से ही संत साहित्य की विषय-वस्तु या रूप भाषा, भाव और विचार का विश्लेषण अधूरा रह जाता है। तुलसी साहित्य को 'प्रतिक्रियावादी' कहने वाले आलोचक संत साहित्य के सामाजिक आधार की अवहेलना करते हैं और संतों के लोक-धर्म की क्रांतिकारी भूमिका को समझते नहीं हैं। यह लोक-धर्म सामंतवाद को कमज़ोर करता है, दृढ़ नहीं। सामंती व्यवस्था में धरती पर सामंतों का अधिकार था तो धर्म पर पुरोहितों का। संतों ने धर्म पर से पुरोहितों का अधिकार तंत्र खत्म किया। जनता को - जुलाहों-किसानों को - यह मौका मिला कि शास्त्रों-पुरोहितों के बिना भी काम चल सकता है। यह ठीक है कि भक्ति-आंदोलन के संत कवियों के पास एक सुसंगत दार्शनिक दृष्टि नहीं है, कभी वे संसार को मिथ्या कहते हैं, कभी सत्य। उन पर भाग्यवाद, मायावाद, पुरोहिताई चिंतन का असर है पर यह न भूलना चाहिए कि 'संत साहित्य भारतीय जनता के प्रेम, घृणा, आशाओं और वेदना का दर्पण है। वह उसके हृदय की सबसे कोमल, सबसे सबल भावनाओं का प्रतिबिंब है।' भक्ति, धर्म, दर्शन की सभी परंपराओं पर ध्यान देकर डॉ.शर्मा ने भक्ति-आंदोलन और संत-काव्य की अंतर्वस्तु के सामाजिक आधार को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया।

वीरगाथाकाल के बाद भक्ति-भावना का उदय कैसे? जयशंकर प्रसाद ने 'रहस्यवाद' निबंध में इस स्थिति की व्याख्या की और कहा - 'फलतः पिछले काल में भारत के दार्शनिक अनात्मवादी ही भक्तिवादी बने और बुद्धिवाद का विकास भक्ति के रूप में हुआ।.. जिन-जिन लोगों को विश्वास नहीं था उन्हें एक त्राणकारी की आवश्यकता हुई।' कवि प्रसाद का यह मत आ.शुक्ल के विचार से मेल खाता है कि एक के बाद राजनैतिक पराजय से हिंदुओं का आत्म-विश्वास डिगने लगा और वे भक्ति भावना की ओर उन्मुख हो गए। ग्रियर्सन के लिए भक्ति ईसाइयों की देन थी, किंतु आ.शुक्ल के लिए मुस्लिम आक्रमणों की प्रतिक्रिया का परिणाम और आ.हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के लिए 'भारतीय चिंता का स्वाभाविक विकास'। आ.शुक्ल बाहरी इस्लामी तत्वों से क्रिया-प्रतिक्रिया को, हिंदू-मन की निराशा को महत्व देते हैं - 'भक्ति का जो सोता दक्षिण की ओर से धीरे-धीरे उत्तर भारत की ओर पहले से ही आ रहा था उसे राजनीतिक परिवर्तन के कारण शून्य पड़ते हुए जनता के हृदय-क्षेत्र में फैलने के लिए पूरा स्थान मिला।' इस्लाम की आक्रामक परिस्थितियों ने भक्ति के इस प्रभाव को बढ़ा दिया। आ.शुक्ल के इस मत से आहत होकर आ.हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने 'हिंदी साहित्य की भूमिका' में लिखा - 'मैं ज़ोर

Scanned by CamScanner

देकर कहना चाहता हूँ कि अगर इस्लाम नहीं आया होता इस (हिंदी) साहित्य का बारह आना वैसा ही होता जैसा आज है।' यह ज़ोर इसलिए देना पड़ा कि आ.शुक्ल कह रहे थे - 'देश में मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित हो जाने पर हिंदू जनता के हृदय में गौरव, गर्व और उत्साह के लिए अवकाश न रह गया।... अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था।' आ.द्विवेदी जी हिंदी साहित्य को 'हतदर्प पराजित जाति' की सम्पत्ति मानने को तैयार नहीं थे। आ.शुक्ल ने 'जनता की चित्तवृत्ति' पर ध्यान दिया आ. द्विवेदी ने 'लोक-चिंता' पर। डॉ. रामविलास शर्मा ने आ.शुक्ल और आ.द्विवेदी के विचारों पर ध्यान केंद्रित करते हुए कहा - 'संत साहित्य भारतीय जीवन की अपनी परिस्थितियों से पैदा हुआ था। उसका स्रोत बौद्ध धर्म या इस्लाम में हिंदू धर्म में ढूँढना सही नहीं है। इन धर्मों का उस पर असर है लेकिन ये उसके मूल स्रोत नहीं है।' (परंपरा का मूल्यांकन, पृ. 46) आ.शुक्ल का हवाला देकर डॉ.शर्मा ने कहा - 'शुक्ल जी का विचार था कि यह निराशा और उदासी मुस्लिम शासन के कारण थी। देश में विदेशी जातियों का आक्रमण और उनका शासन भी एक कारण था। लेकिन वास्तविकता यह है कि सत्ता में सहायक और भाग लेने वाले देशी सामंत भी थे उन सामंतों के देशी सहायक पंडे और पुरोहित भी थे।' आ. शुक्ल के मत मे कमी यह है कि शुक्ल जी के विवेचन में 'देशी सामंतों की भूमिका हर जगह स्पष्ट नहीं है। इसलिए उन्होंने निराशा का कारण मुस्लिम शासन बताया है और लोक-धर्म से विमुख कवियों को विदेशी मतों से विमुख कहा है।'

डॉ. रामविलास शर्मा ने भक्ति-आंदोलन को अखिल भारतीय सांस्कृतिक आंदोलन मानते हुए कहा कि भक्ति-आंदोलन ने विभिन्न प्रदेशों को राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बाँधने का कार्य किया। भक्त कवियों ने सर्वत्र लोक-भाषाओं में लोक-साहित्य की रचना की। कश्मीर में ललदेव, तमिलनाडु में अंदाल, बंगाल में चंडीदास, गुजरात में नरसी मेहता, महाराष्ट्र में नामदेव, उत्तर भारत में मीरा, कबीर, सूर-तुलसी, जायसी - सभी ने लोक में भावनात्मक एकता कायम की। भक्ति-आंदोलन की पुरोहितवादी जातिवादी नस्लवादी सामंतवाद-विरोधी चेतना का हवाला देकर कहा - 'संभवतः जाति-प्रथा जितनी दृढ़ आज है उतनी नामदेव दर्जी, सेना नाई, चोख महार, रैदास चमार और कबीर जुलाहे के समय में न थी। और जातिगत संकीर्णता जितनी शिक्षित जनों में है संभवतः उतनी सूर और कबीर के पद गाने वाले अपढ़ जनों में नहीं है। वर्णाश्रम धर्म और जाति प्रथा जितनी तीव्र आलोचना भक्ति साहित्य में है उतनी आधुनिक साहित्य में नहीं है।' (परंपरा का मूल्यांकन, पृ. 47)

डॉ. रामविलास शर्मा भक्ति-आंदोलन और संत साहित्य को नवजागरणकाल मानते हैं, आधुनिकता का प्रगतिशील काल। वे उसे आ.शुक्ल और आ.हजारी प्रसाद द्विवेदी की तरह 'मध्यकाल' नहीं मानते हैं। जो साहित्य लाखों-करोड़ों जनता के हृदय को आंदोलित करता है उसे 'मध्ययुगीन' कहना उसकी तौहीन है। 'भक्त' और 'संत' एक ही भाव के द्योतक हैं, उनमें फर्क करना व्यर्थ है - 'संत' में नर-नारी का भेद भी गलत है मीराबाई भी संत हैं, तुलसी भी संत हैं। इसीलिए यह कहना कि निर्गुण संत अधिक क्रांतिकारी हैं, सगुण संत कम विचार के क्षेत्र में व्यर्थ का वितंडावाद खड़ा करना है, संतों का एक ही लोक-दर्शन है - 'प्रेम'। प्रेम से ही मनुष्य बड़ा होता है - वैकुंठी होता है, महान उदात्त बनता है। संतों के मानवतावाद को अपनाकर ही समाज प्रगति कर सकता है। भक्ति-आंदोलन और भक्ति-काव्य की डॉ. शर्मा द्वारा की गई यह व्याख्या बहुत ही प्रगतिशील है।

Scanned by CamScanner